३. पंद्रह अगस्त

– गिरिजाकुमार माथुर

कवि परिचय : गिरिजाकुमार माथुर जी का जन्म २२ अगस्त १९१९ को अशोक नगर (मध्य प्रदेश) में हुआ। आपकी आरंभिक शिक्षा झाँसी में तथा स्नातकोत्तर शिक्षा लखनऊ में हुई। आपने ऑल इंडिया रेडियो, दिल्ली तथा आकाशवाणी लखनऊ में सेवा प्रदान की। संयुक्त राष्ट्र संघ, न्यूयार्क में सूचनाधिकारी का पदभार भी सँभाला। आपके काव्य में राष्ट्रीय चेतना के स्वर मुखरित होने के कारण प्रत्येक भारतीय के मन में जोश भर देते हैं। माथुर जी की मृत्यु १९९४ में हुई ।

प्रमुख कृतियाँ : 'मंजीर', 'नाश और निर्माण', 'धूप के धान', 'शिलापंख चमकीले', 'जो बँध नहीं सका', 'साक्षी रहे वर्तमान', 'मैं वक्त के हूँ सामने' (काव्य संग्रह) आदि।

काव्य प्रकार : यह 'गीत' विधा है जिसमें एक मुखड़ा और दो या तीन अंतरे होते हैं। इसमें परंपरागत भावबोध तथा शिल्प प्रस्तुत किया जाता है । कवि अपने कथ्य की अभिव्यक्ति हेतु प्रतीकों, बिंबों तथा उपमानों को लोक जीवन से लेकर उनका प्रयोग करता है। 'तार सप्तक' के कवियों में अज्ञेय, मुक्तिबोध, प्रभाकर माचवे, गिरिजाकुमार माथुर, नेमिचंद्र जैन, भारतभूषण अग्रवाल, रामविलास शर्मा का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

काव्य परिचय : प्रस्तुत गीत में कवि ने स्वतंत्रता के उत्साह को अभिव्यक्त किया है। स्वतंत्रता के पश्चात विदेशी शासकों से मुक्ति का उल्लास देश में चारों ओर छलक रहा है। इस नवउल्लास के साथ-साथ कवि देशवासियों तथा सैनिकों को सजग और जागरूक रहने का आवाहन कर रहा है। समस्त भारतवासियों का लक्ष्य यही होना चाहिए कि भारत की स्वतंत्रता पर अब कोई आँच न आने पाए क्योंकि दुखों की काली छाया अभी पूर्ण रूप से हटी नहीं है। जब शोषित, पीड़ित और मृतप्राय समाज का पुनरुत्थान होगा तभी सही मायने में भारत आजाद कहलाएगा।

आज जीत की रात
पहरुए, सावधान रहना !
खुले देश के द्‌वार
अचल दीपक समान रहना ।

प्रथम चरण है नये स्वर्ग का
है मंजिल का छोर,
इस जनमंथन से उठ आई
पहली रतन हिलोर,
अभी शेष है पूरी होना
जीवन मुक्ता डोर,
क्योंकि नहीं मिट पाई दुख की
विगत साँवली कोर,
ले युग की पतवार
बने अंबुधि महान रहना,
पहरुए, सावधान रहना !

विषम शृंखलाएँ टूटी हैं
खुलीं समस्त दिशाएँ,
आज प्रभंजन बनकर चलतीं
युग बंदिनी हवाएँ,
प्रश्नचिह्न बन खड़ी हो गईं
ये सिमटी सीमाएँ,
आज पुराने सिंहासन की
टूट रहीं प्रतिमाएँ,
उठता है तूफान
इंदु, तुम दीप्तिमान रहना,
पहरुए, सावधान रहना !

ऊँची हुई मशाल हमारी
आगे कठिन डगर है,
शत्रु हट गया लेकिन उसकी
छायाओं का डर है,
शोषण से मृत है समाज
कमजोर हमारा घर है,
किंतु आ रही नई जिंदगी
यह विश्वास अमर है,
जनगंगा में ज्वार
लहर तुम प्रवहमान रहना,
पहरुए, सावधान रहना !

('धूप के धान' काव्य संग्रह से)

o

शब्दार्थ :

पहरुए = पहरेदार, प्रहरी
पतवार = नाव खेने का साधन
अंबुधि = सागर, समुद्र
प्रभंजन = आँधी, तूफान
इंदु = चंद्रमा
दीप्तिमान = प्रकाशमान, कांतिमान, प्रभायुक्त

स्वाध्याय

आकलन

१. (अ) संकल्पना स्पष्ट कीजिए –

(१) नये स्वर्ग का प्रथम चरण

(२) विषम शृंखलाएँ

(३) युग बंदिनी हवाएँ

(आ) लिखिए –

समाज की वर्तमान स्थिति → (१) ....
→ (२) ....

काव्य सौंदर्य

२. आशय लिखिए :

(अ) ''ऊँची हुई मशाल हमारी......हमारा घर है ।''

(आ) ''युग बंदिनी हवाएँ... टूट रहीं प्रतिमाएँ।''

अभिव्यक्ति

३. (अ) 'देश की रक्षा–मेरा कर्तव्य', इसपर अपना मत स्पष्ट कीजिए ।

(आ) 'देश के विकास में युवकों का योगदान', इस विषय पर अपने विचार लिखिए।

रसास्वादन

४. स्वतंत्रता का वास्तविक अर्थ समझते हुए प्रस्तुत गीत का रसास्वादन कीजिए।

साहित्य संबंधी सामान्य ज्ञान

५. जानकारी दीजिए :

(अ) गिरिजाकुमार माथुर जी के काव्यसंग्रह –

....

....

(आ) 'तार सप्तक' के दो कवियों के नाम –

....

....

रस

वीर रस – किसी पद में वर्णित प्रसंग हमारे हृदय में ओज, उमंग, उत्साह का भाव उत्पन्न करते हैं, तब वीर रस का निर्माण होता है । ये भाव शत्रुओं के प्रति विद्रोह, अधर्म, अत्याचार का विनाश, असहायों को कष्ट से मुक्ति दिलाने में व्यंजित होते हैं ।

उदा. – (१) साजि चतुरंग सैन, अंग में उमंग धरि ।
सरजा सिवाजी, जंग जीतन चलत है ।
भूषण भनत नाद, बिहद नगारन के
नदी-नद मद, गैबरन के रलत है ।

– भूषण

(२) दूर फिरंगी को करने की सबने मन में ठानी थी ।
चमक उठी सन सत्तावन में वह तलवार पुरानी थी ।
बुंदेले हरबोलों के मुँह हमने सुनी कहानी थी ।
खूब लड़ी मर्दानी, वह तो झाँसीवाली रानी थी ।

– सुभद्राकुमारी चौहान

भयानक रस – जब काव्य में भयानक वस्तुओं या दृश्यों के प्रत्यक्षीकरण के फलस्वरूप हृदय में भय का भाव उत्पन्न होता है, तब भयानक रस की अभिव्यंजना होती है ।

उदा. – (१) प्रथम टंकारि झुकि झारि संसार-मद चंडको दंड रह्यो मंडि नवखंड कों ।
चालि अचला अचल घालि दिगपालबल पालि रिषिराज के वचन परचंड कों ।
बांधि बर स्वर्ग कों साधि अपवर्ग धनु भंग को सब्ध गयो भेदि ब्रह्मांड कों ।

– केशवदास

(२) उधर गरजती सिंधु लहरिया, कुटिल काल के जालों-सी ।
चली आ रही है, फेन उगलती, फन फैलाए व्यालों-सी ।।

– जयशंकर प्रसाद